ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-2* May- 2021
Anthology : The Research

ओशो का शिक्षा दर्शन

Osho's Philosophy of Education

Paper Submission: 02/05/2021, Date of Acceptance: 24/05/2021, Date of Publication: 25/05/2021

विजय कुमार भारद्वाज
प्रवक्ता,
दर्शनशास्त्र विभाग,
एस. एम. एस. आई. एस.
दिधी हाजीपुर, वैशाली,
बिहार, भारत

सारांश

शिक्षा का उद्देश्य हमारे संशयो का उन्मूलन एवं कठिनाइयों का निवारण है। विद्या से ही मानवता के गुणों का विकास होता है विद्या के बिना मनुष्य एवं पशु में कोई अंतर नहीं होता। ओशो के अनुसार शिक्षा का स्वरूप प्रतिस्पर्धात्मक नहीं होना चाहिए। ओशो एक ऐसी शिक्षा पद्धति की बात करते हैं जो संतुलित हो और जिसमें शरीर हृदय, बुद्धि और आत्मा इन सब की शिक्षा दी जाती हो। लेकिन अभी की शिक्षा ऐसी नहीं है। इसलिए ओशो वर्तमान शिक्षा पद्धति से दुखी होकर कहते हैं – "शिक्षा की स्थिति देखकर हृदय में बहुत पीड़ा होती है। शिक्षा के नाम पर जिन परतंत्रताओ का पोषण किया जाता है उनसे एक स्वतंत्र और स्वस्थ मनुष्य का जन्म संभव नहीं है। मनुष्य जाति जिस कुरूपता और अपंगता में फंसी है उसके मूल कारण शिक्षा में ही निहित हैं। शिक्षा ने मनुष्य को प्रकृति से तोड़ दिया है जिसके चलते उससे संस्कृति पैदा नहीं हो सकती उल्टे विकृति पैदा होती है और इस विकृति को ही प्रत्येक पीढ़ी आने वाली नई पीढ़ियों पर थोपते चली जाती है। और फिर जब विकृति ही संस्कृति समझी जाती हो तो स्वभावतरू थोपने का कार्य पुण्य की आभा भी ले लेता हो तो आश्चर्य नहीं है। और जब पाप पुण्य के वेश में प्रकट होता है तो अत्यंत घातक हो जाता है। इसलिए ही तो शोषण सेवा की आड़ में खड़ा होता है और हिंसा अहिंसा के वस्त्र ओढ़ती है, और विकृतियां संस्कृति के मुखौटे पहन लेती हैं।

The aim of education is to remove our doubts and remove difficulties. The qualities of humanity are developed only through education, without knowledge there is no difference between man and animal. According to Osho, the nature of education should not be competitive. Osho talks of an education system that is balanced and in which the body, heart, intellect and soul are all taught. But the present education is not like this. That's why Osho is saddened by the current education system and says - Seeing the state of education, there is a lot of pain in the heart. The birth of a free and healthy man is not possible from the subordinations which are nurtured in the name of education. The root cause of the ugliness and disability in which the human race is trapped lies in education itself. Education has broken man from nature, due to which culture cannot be born from it, on the contrary, distortion arises and this distortion is imposed on the new generations to come. And then, when perversion is considered to be culture, then it is not surprising if the act of imposing nature takes the aura of virtue. And when sin appears in the guise of virtue it becomes extremely fatal. That is why exploitation stands under the guise of service and violence wears the cloak of non-violence, and perversions wear the mask of culture.

मुख्य शब्दः ओशो, शिक्षा दर्शन, शिक्षा पद्धति ।

Osho, Education Philosophy, Education System,

प्रस्तावना

अधर्म का धर्म के मंदिरों में आवास अकारण नही हैं। अधर्म सीधा और नग्न कभी उपस्थित नहीं होता है। इसलिए यह उचित होगा कि मात्र वस्त्रों में विश्वास ना किया जाए। वस्त्रों को उधाड कर देख लेना अत्यंत ही आवश्यक है। मैं भी शिक्षा के वस्त्रों को उधाड कर देखना चाहूंगा। इसमें आप बुरा तो नहीं मानेंगे ? क्योकि ऐसा करना आवश्यक है शिक्षा की वास्तविक आत्मा को देखने के लिए उसके तथाकथित वस्त्रों को हटाना ही होगा क्योंकि अत्यधिक सुंदर वस्त्रों में जरूर ही कोई अस्वस्थ और कुरूप आत्मा निवास कर रही है। अन्यथा मनुष्य का जीवन इतनी घृणा हिंसा और अधर्म का जीवन नहीं हो सकता। जीवन के वृक्ष पर कड़वे और विषाक्त फल देखकर क्या गलत बीजो के बोये जाने का स्मरण नहीं होता? बीज गलत नहीं तो वृक्ष पर गलत फल कैसे आ सकते हैं ? वृक्ष का विषाक्त फलों से भरा होना बीज में विष के अतिरिक्त और किस बात की खबर है? मनुष्य

गलत है तो निश्चित शिक्षा सही नहीं है।" [1] इसलिए शिक्षा का जितना प्रचार प्रसार हुआ है उतना ही मनुष्य अशांत और निराश हो गया है। चांद पर पहुंच जाने के बाद भी को खोखला और तनावग्रस्त्र है जैसा कि स्वामी सत्य वेदांत लिखते भी हैं "संसार में शिक्षा का जितना प्रसार पिछले लगभग पचास वर्षों में हुआ है उतना पहले कभी नहीं हुआ। और विकासशील देशों में तो पिछले पचीस -तीस वर्षों में अत्यधिक लोगों को शिक्षित करने के अथक प्रयास हुए हैं । यह आश्चर्य की बात है कि शिक्षा के लिए इतने प्रयास किये जाने पर भी जिन्हें पढ़ा-लिखा कहा जाता है, जिन्हें शिक्षित और सुसंस्कृत कहा जाता है, उन्होंने ही संसार में जितनी अशांति, जितना तनाव, जितनी हिंसा फैलाया है उतना अनपढ़, अशिक्षित, गवार लोगों ने नहीं फैलाया शिक्षा के कारण आधुनिक मनुष्य ने निश्चित ही चांद- तारों की ऊंचाइयां छू ली है, परंतु उनके भीतर उतना ही गहरा खोखलापन उतनी ही अधिक निराशा और सुनापन उतर आया है।" [2] ओशो के अनुसार इसका कारण शिक्षा का दोषपूर्ण होना है और वह दोषपूर्ण इसलिए हो गयी है कि वह अनुशासन, आदर्श, महत्वाकांक्षा, प्रतियोगिता और तुलना आदि से युक्त हो गई है। "शिक्षा का कार्य मनुष्य के भीतर छिपी संभावनाओं को वास्तविक करने में सहायता करना है। उसके स्वं की पहचान करने में मदद करना है। उसके आत्मा को उसकी निजता कोए प्रकट करने में सहयोग करना है। परंतु अभी की शिक्षा ऐसा नहीं करती और इसके बदले बाहर से दूसरे का उधार विचार चित्त में भरकर उसे जड़ एवं बूढ़ा बना देती है।" मात्र दूसरों के विचारों को सिख लेना मृत या जड़ होने के तुल्य है। "विचार संग्रह जड़ता लाता है विचार संग्रह से विचार और विवेक का जन्म नहीं हो सकता।" 4 ओशो के अनुसार विचार और विवेक का जन्म न हो इसलिए शिक्षा मे अनुशासन पर जोर दिया जाता है। अनुशासन के द्वारा बच्चों का स्वतंत्र विकास नहीं होता। उनके ऊपर बहुत सी चीजें थोप दी जाती हैं और अनुशासन के नाम पर उन्हें मानने के लिए बाध्य किया जाता है। इससे व्यक्ति बुद्धिहीन, जड़ और परतंत्र हो जाता है। तथा यह परतंत्रता जब असहय हो जाती है तो विरोध स्वरूप स्वच्छंदता के रूप में प्रकट होती है जो कि विध्वंसक होती है। इसलिए ओशो कहते हैं कि शिक्षा को अनुशासन से मुक्त होकर विवेक को जगाने वाली होनी चाहिए। वे कहते हैं - "मनुष्य की परतंत्रता के लिए ही अनुशासन पर अत्यधिक बल दिया जाता है। विवेक के अभाव की पूर्ति अनुशासन से करने की कोशिश की जाती है।

विवेक हो तो व्यक्ति में और उसके जीवन में एक स्वतरू स्फुर्त अनुशासन अपने आप ही पैदा होता है। उसे लाना नहीं पड़ता। लेकिन जहां विवेक सिखाया ही नहीं जाता हो, वहां तो ऊपर से थोपे गए अनुशासन पर ही निर्भर होना पड़ता है। यह अनुशासन मिथ्या तो होगा हीं। क्योंकि वह व्यक्ति के अंतस से नहीं जगता है और उसकी जड़े उसके स्वयं के विवेक में नहीं होती हैं। व्यक्ति का अंतः करण तो सदा भीतर ही भीतर उसके विरोध में सुलगता रहता है। ऐसा अनुशासन व्यक्ति की चेतना की सारी सहजता और आनंद को छीन लेता है, और टूटे तो भी व्यक्ति को खंडहर कर जाता है। बाहर से आया हुआ अनुशासन सब भाति मनुष्य के अहित में है । शिक्षा बाह्यअनुशासन से मुक्त होनी चाहिए। उसे तो व्यक्ति में प्रसुप्त विवेक को जगाना चाहिए।" 5 ओशो के अनुसार विवेक से भी एक अनुशासन पैदा होता है जो आंतरिक होता है। यह बाहर से थोपा हुआ नहीं, भीतर से प्रस्फुटित होता है। यहां आत्मानुशासन होता है। इसलिए इसमें कोई दमन और कोई दबाव नहीं होता। यह सहज और सरल होता है। फलतरू इससे स्वच्छंदता और अराजकता पैदा नहीं होती। डॉक्टर रामचंद्र प्रसाद ओशो के इस विचार पर प्रकाश डालते हुए और सहमति व्यक्त करते हुए लिखते हैं - "जहां विवेक पर बल दिया जाना चाहिए, वहां शिक्षालयों में अनुशासन पर बल दिया जाता है और विवेक के अभाव की पूर्ति अनुशासन से करने के यत्न होने लगते हैं। वस्तुतः विवेक हो तो अनुशासन के आते देर नहीं लगती और विवेक न हो तो थोपा गया अनुशासन निरर्थक होता है। जिस अनुशासन की जड़ें विवेक में हो उसे ही आचार्य रजनीश स्थाई कहते हैं, उनके अनुसार वही आत्मानुशासन हैं। आरोपित अनुशासन से विद्रोह की भावना का उन्मेष होता है और बलपूर्वक अनुशासित व्यक्ति स्वच्छंदता के लिए अधीर हो उठता है। शिक्षा बाहयानुशासन ना होकर जागे हुए विवेक पर आधारित आत्मानुशासन है। इसमें न दमन होता है न दबाव। इसलिए इससे स्वच्छंदता की संभावनाएं समाप्त हो जाती हैं। यदि शिक्षा चाहे तो वह मनुष्य को स्वतंत्र बना सकती है। अनुशासित व्यक्ति अब नहीं चाहिए, स्वतंत्र और स्वयं के विवेक को उपलब्ध व्यक्ति चाहिए। उनमें ही आशा और उनमें ही भविष्य है।" 6 अनुशासन के अतिरिक्त आदर्श और तुलना भी शिक्षा को दोषपूर्ण बनाए हुए हैं। अभी की शिक्षा में ये दोनों अनिवार्य रूप से जुड़े हुए हैं। इनके कारण बच्चों को जो वह स्वयं हो सकता है वह होने की सुविधा नहीं मिल पाती, बल्कि इसके बदले उसे किसी और के जैसा होने के लिए प्रशिक्षित और बाध्य किया जाता है। उसे अपने जैसा न होकर किसी और के जैसा होने की शिक्षा दी जाती है। इससे बच्चे में तनाव पैदा होता है और वह हिंसक हो जाता है। इसलिए ओशो इस शिक्षा व्यवस्था को खतरनाक मानते हुए कहते हैं - "ऐसी शिक्षा खतरनाक है, ऐसे धर्म खतरनाक हैं। शिक्षा तो वह है जो अभय सिखाएं। आलोक में प्रतिष्ठा दे, साहस दे, और विद्रोह की शक्ति दे। अज्ञात की चुनौती को मानने की हिम्मत दे। ईर्ष्या प्रतिस्पर्धा नहीं प्रेम सिखाये। महत्वाकांक्षा की ज्वरग्रस्त गति नहीं वरन सहज स्व - स्फूर्त विकास दे। लेकिन यह तो तभी होगा जब हम प्रत्येक व्यक्ति की निजता और अद्वितीयता को स्वीकार करेंगे। किसी की किसी से तुलना आधारभूत भूल है तुलना से स्पर्धा पैदा होती है। न कोई किसी से आगे है, न पीछे, न कोई

किसी से ऊपर है, न नीचे। प्रत्येक वही, है जो वह है और प्रत्येक को वही होना है आदर्शों की पाठशाला ऐसा नहीं होने देती।बच्चों को कहा जाता है राम जैसा बनो, बुद्ध जैसा बनो, गांधी जैसा बनो। इससे भूल भरी बात और क्या होगी? क्या कोई किसी और जैसा बन सकता है या कभी अतीत में बन सका है। राम तो बनना असंभव है हां रामलीला में राम जरूर बना जा सकता है। इसी कारण तो संसार में इतना पाखंड है। पाखंड आदर्श की छाया है। जब तक आदर्श थोपे जाएंगे तब तक पाखंड भी रहेंगे। पाखंडो को मिटाना है तो आदर्शों को छोड़ना आवश्यक है।वस्तुतः कोई भी मनुष्य किसी दूसरे जैसा होने के लिए पैदा नहीं हुआ है। प्रत्येक को स्वयं जैसा ही होना है। प्रत्येक को उस बीज को ही वृक्ष तक पहुंचाना है जो कि उसमें ही छिपा है और मौजूद है।शिक्षा जिस दिन व्यक्ति की अद्वितीयता और बेजोड़ निजता के सत्य को स्वीकार करेगी उसी दिन एक बड़ी क्रांति का स्वागत हो जाएगा। फिर हम किसी के ऊपर किसी और के ढांचे को नहीं थोपेगे। वरन उस व्यक्ति के बीज में ही तो जो प्रसुप्त है उसके जागरण के लिए चेष्टारत रहेंगे।" 7 ओशो के अनुसार आज की शिक्षा व्यवस्था में महत्वाकांक्षा एवं प्रतिस्पर्धा की भी बड़ी भूमिका है, क्योंकि ये शिक्षा से अवियोज्य रूप से जुड़े हैं। वर्तमान शिक्षा व्यक्ति को महत्वकांक्षी बनाती है। उसे प्रतियोगिता सिखाती है और उसमें प्रथम आने की दौड़ पैदा करती है। इससे व्यक्ति में हिंसा पैदा होती। हर व्यक्ति दूसरे को पीछे छोड़कर आगे निकल जाना चाहता है। वह सफल होना चाहता है, प्रथम आना चाहता है। इस प्रकृया में हिंसा है क्योंकि सफल होने वाला व्यक्ति, प्रथम आने वाला व्यक्ति, पीछे रह जाने वाले व्यक्ति, असफल हो जाने वाले व्यक्ति की कोई चिंता नहीं करता। वह किसी भी प्रकार खुद आगे बढ़ जाना चाहता है। ओशो इसे स्पष्ट करते हुए कहते हैं - "क्या आपको पता है दुनिया में इतनी इंफीरियारिटी कॉम्प्लेक्स, इतनी हीनता किसने पैदा की है? आपके प्रथम होने की शिक्षा ने। क्योंकि तीस बच्चों में एक बच्चा प्रथम आ सकेगा उन्तीस बच्चे पीछे छूट जाएंगे। एक बच्चे को प्रथम लाने के लिए उन्तीस बच्चों की आत्माओं के साथ घात किया जा रहा है। एक बच्चे को सम्मान देने के लिए उन्तीस बच्चों का अपमान किया जा रहा है। एक बच्चे को गौरव देने के लिए उन्तीस बच्चों की कुर्बानी हो रही है, यह आपको दिखाई पड़ता है। नहीं दिखाई पड़ता है।ये जो सफल लोग हैं थोड़े से इनके पीछे कितने असफल लोगों की पंक्तियां खड़ी हो जाती हैं, इनका कोई बोध है? और ये दस - पाँच सफल लोग यह दुनिया नहीं बनाते हैं दुनिया बनाते हैं। वो लोग जो पीछे रह गए हैं असफल हो गए हैं उन उदास लोगों से यह दुनिया बनेगी तो यह स्वर्ग नहीं बन सकती इसका नर्क बनना निश्चित है। उन हारे हुए लोगों से यह दुनिया बनेगी तो यह दुनिया अच्छी नहीं हो सकती। एवं जो शिक्षा और समाज एवं संस्कृति बहुत बड़े वर्ग को हारा हुआ और पराजित सिद्ध कर देती है वह संस्कृति स्वागत के योग्य नहीं वह शिक्षा भी आदर के योग्य नहीं। महत्वाकांक्षा मनुष्य को कहाँ कहाँ पहुंचा देती है ।जब कोई व्यक्ति प्रथम आने की शिक्षा में संलग्न होता है तो आपको पता है वह क्या सिख रहा है? वह क्या कर रहा है? उसके भीतर क्या गुजर रहा है? उसको जो खुशी मिल रही है प्रथम स्थान पाकर, आपको पता है वह खुशी किस बात पर खड़ी है?

वह प्रथम स्थान पाने की खुशी नहीं है। वह दूसरों को दुखी करने का सुख है। जो पीछे छूट गए हैं और जिनकी आंखें आंसुओं से भरी है। प्रथम आने वाले की मुस्कुराहट पीछे छुट गए लोगों के आंसुओं के बदौलत ही है। महत्वाकांक्षा इसलिए अनिवार्य रूप से हिंसा सिखलाती है। महत्वाकांक्षा हिंसा का गहरे से गहरा परिणाम है ।महत्वाकांक्षा के केंद्र में हिंसा है। और जब एक बार युवा होते - होते तक चित्त इसमें दीक्षित हो जाता है तो फिर जीवन भर इसी दौड़ में दौड़ता है और जीवित रहता है फिर किसके कंधे पर पैर रखना है। किनकी लाशों को सीढ़ियंॉ ' बनाना है इसपर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। "8 डॉ सरोज कुमार वर्मा भी ओशो के इस विचार से सहमति व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि - "इस शिक्षा के घातक होने का सबसे पहला कारण महत्वाकांक्षा है। ओशो के अनुसार वर्तमान शिक्षा महत्वाकांक्षा पर आधारित है। इसलिए विध्वंसात्मक हो गयी है क्योंकि महत्वाकांक्षा मनुष्य में हीनता पैदा करती है। फलतरू वह तनावग्रस्त हो जाता है और उसकी सृजनात्मक क्षमता नष्ट हो जाती है। इसलिए ओशो कहते हैं - क्या आपको पता है मनुष्य के मन में जो बीमारियां घर कर सकती है महत्वाकांक्षा उसमें सबसे बड़ी है। और क्या आपको पता है ? जो आदमी महत्वाकांक्षा के घेरे में घिर जाता है और जिसके प्राणों में महत्वाकांक्षा का ज्वर समाविष्ट हो जाता है वह इस जगत में पूरे जीवन में यत्न करके भी कभी शांति और आनंद को प्राप्त नहीं कर पाता। क्या आपको पता है कि महत्वाकांक्षा से बड़ा जहर अब तक नहीं खोजा जा सका है।" [9]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य ओशो के शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना है।

निष्कर्ष

ओशो इस जहर से बचने के लिए वर्तमान शिक्षा - पद्धति में आमूल - चूल परिवर्तन की बात करते हैं और कहते हैं कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था से महत्वाकांक्षा, प्रतियोगिता, आदर्श तुलना और अनुशासन आदि को हटा कर इसको सत्य और प्रेम से युक्त करना चाहिए । प्रथम एवं अंतिम की कोटियों को तोड़कर सफलता को एकमात्र मूल्य मानने के बदले शिव और सौंदर्य को भी शिक्षा में शामिल किया जाना चाहिए। ओशो के शब्दों में - इसके लिए शिक्षण की आमूल पद्धति ही बदलनी होगी। प्रथम और अंतिम की कोटियां तोड़नी होंगी। परीक्षाओं को समाप्त

करना होगा। और इन सबकी जगह जीवन के उन मूल्यों की स्थापना करनी होगी जो अहंशून्य और प्रेमपूर्ण जीवन को सर्वोच्च जीवन दर्शन मनाने से पैदा होते हैं।

संदर्भ ग्रंथों की सूची

1. *स्वामी सत्य वेदांत के लेखक "कौन है ओशो " से उद्धत, साधना पथ दिसंबर 2013, पृष्ठ संख्या -14*
2. *स्वामी सत्य वेदांत शिक्षारू मुक्ति का द्वार (भूमिका) शिक्षा में क्रांति पृष्ठ संख्या पपप*
3. *Shree Rajneesh, The Book (An Introduction to the Teaching of Bhagwan Shree Rajneesh) Series - 1 from A to H, Rajneesh Foundation International, P.O. Box 9 Rajneesh Puram Oregon 37741, U. S. A. , First Edition : March 1984, Page Number 413-4204*
4. *भगवान श्री रजनीश शिक्षा में क्रांति पृष्ठ संख्या - 4*
5. *भगवान श्री रजनीश शिक्षा में क्रांति पृष्ठ संख्या - 7*
6. *डॉव रामचंद्र प्रसाद , आचार्य रजनीशरू समन्वय विश्लेषण और संसिद्धि, मोतीलाल बनारसीदास, चौक वाराणसी - 1 उत्तर प्रदेश द्वितीय संशोधित संस्करण 1973 पृष्ठ संख्या - 122 - 123*
7. *भगवान श्री रजनीश, शिक्षा में क्रांति पृष्ठ संख्या 12 - 14*
8. *भगवान श्री रजनीश, शिक्षा में क्रांति पृष्ठ संख्या 183 - 185*
9. *डॉ सरोज कुमार वर्मा , आज की समस्याये और ओशो का शिक्षा दर्शन , दार्शनिक त्रैमासिक वर्ष - 48 अंक - 3 जुलाई - सितंबर 2002, अखिल भारतीय दर्शन परिषद् पृष्ठ संख्या 107 - 108*